Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2020 GISRRJ | Volume 3 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

पुराण और भारतीय संस्कृति

श्रीमती कृतिका शर्मा
प्रधानाचार्य, राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय किशनपुरा टोंक, राजस्थान।

Article Info
Volume 3 Issue 3
Page Number : 192-197

Publication Issue :
May-June-2020

Article History
Accepted : 20 June 2020
Published : 30 June 2020

शोधसारांश – पुराण विश्व साहित्य के प्रचीनत्म ग्रँथ हैं। उन में लिखित ज्ञान और नैतिकता की बातें आज भी प्रासंगिक, अमूल्य तथा मानव सभ्यता की आधारशिला हैं। वेदों की भाषा तथा शैली कठिन है। पुराण उसी ज्ञान के सहज तथा रोचक संस्करण हैं। राष्ट्र अपना इतिहास इसी दृष्टिकोण से लिखता है कि उसका उद्देश्य पुष्ट हो। महर्षियों में भी भूगोल इतिहास, व्यक्ति, घटना आदि का इसी दृष्टि से वर्णन किया। जो स्थल, घटनाएँ या व्यक्ति समाज के लिये आध्यात्मिक प्रेरणा देने में किसी प्रकार सहायक हो सकते थे, वे चाहे साधारण दृष्टि से कम महत्त्वपूर्ण हों उनका वर्णन किया गया, और जो इस लक्ष्य में प्रेरक नहीं थे, वे चाहे जितने महत्त्वपूर्ण रहे हों उनकी चर्चा नहीं है। जैसे पुराणों में यह कहीं पता नहीं लगता कि जम्बूद्वीप का बड़ा भाग कब, क्यों और कैसे जलमग्न हुआ।

मुख्य–शब्द : भारतीय, संस्कृति, पुराण, आध्यात्मिक, समाज, राष्ट्र।

भारतीय संस्कृति में पुराणों का विशेष महत्त्व है। वेदों के पश्चात् पुराणों की ही मान्यता है। महाभारत और पुराणों को पञ्चम वेद भी कहा गया है।[1] इन पुराणों को प्राचीन एवं मध्यकालीन भारतीय संस्कृति के शर्मिक, दार्शनिक, ऐतिहासिक, वैयक्तिक, सामाजिक, राजनैतिक, भौगोलिक, मनोवैज्ञानिक, विषयों का लोकसंगत विश्वकोष समझना चाहिए।

'पुराण' पद का अर्थ ही है 'वह जो प्राचीनकाल से जीवित है। '

"यस्मात्पुरा ह्यनितीदं पुराणं तेन हि स्मृतम् ।
निरुक्तमस्य यो वेद सर्वपापैः प्रमुच्यते।।"[1]

प्राचीन काल से प्राणित होने के कारण पुराण कहा जाता है। जो इनकी व्याख्या जानता है, वह सब पापों से मुक्त हो जाता है।

Copyright : © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

इस प्रकार एक विशिष्ट प्रकार के साहित्य के अर्थ में पुराण शब्द का प्रयोग जब तक नहीं होता था तब तक इस शब्द का अर्थ प्राचीन कथा अथवा प्राचीन विवरण था। और अज्ञात आदिकाल से, वेदों के भी प्रकट होने के पहले से इस रूप में पुराण विद्यमान थे।

"ऋषः सामानि छन्दासि पुराणं यजुषा सह ।

उच्छिष्टाज्जज्ञिरे सर्वे दिवि देवा दिविश्रितः ।।"[2]

ऋक्, साम, छन्द, पुराण, यजुर्वेद, दिव्य लोक का आश्रय लेकर रहने वाले देवता सब यज्ञ के उच्छिष्ट से उत्पन्न हुये है।

इससे यह स्पष्ट नहीं होता कि ये पुराण ग्रन्थों के रूप में भी रहे हों किन्तु छान्दोग्य उपनिषद और सूत्र ग्रन्थों से यह स्पष्ट होता है कि ग्रन्थों के रूप में पुराण उपनिषदों और सूत्रों के समय में आये ।

"स होवाच ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमा थर्वणम्।

चतुर्थमितिहासपुराणं पञ्चमं वेदानां वेदमिति।।"[3]

उसने कहा हे भगवन्! मैं ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद चौथा, अथर्ववेद, पाँचवाँ इतिहासपुराण, वेदों का वेद जानता हूँ।

पुराण की साहित्यिक परिभाषा अमरकोश तथा कुछ पुराणों में की गई है और उसके पाँच लक्षण बताये गये है–

"सर्गश्च प्रति सर्गश्च वंशो मन्वन्तराणिच ।

वंशानुचरितं चैव पुराणं पञ्चलक्षणम्।।"

सृष्टि, पुनः सृष्टि, देवताओं की वंशावलि, मनु के कालविभाग और राजाओं के वंश वृत्त पुराणों के ये पाँच लक्षण हैं। पीछे की रचनाओं को पुराणों की परिभाषा में लाने के लिये स्वयं पुराणों ने ही यह कहा कि पञ्चलक्षण केवल उपपुराण के लिये हैं, महापुराण होने के लिये तो उसमें दस लक्षण होने चाहिये । इस तरह इन दस में पञ्च लक्षण के अतिरिक्त अन्य लक्षण – वृत्ति, रक्षा, मुक्ति, हेतु (जीव) और उपाश्रय (ब्रह्म) हैं। 19वीं शताब्दी के आकस्मिक दशकों में बिल्सन ने पुराणों का पद्धतियुक्त अध्ययन किया। विष्णुपुराण का अंग्रेजी अनुवाद प्रकाशित किया। इसकी एक बहुत बड़ी भूमिका उन्होंने लिखी थी और आलोचनात्मक तथा तुलनात्मक टिप्पड़ियाँ भी जोड़ी थी। इससे संस्कृत साहित्य के इस महान् अंग की ओर यूरोपियन विद्वानों का ध्यान विशेष रूप से आकर्षित हुआ। पुराणों की अब तक जो अनुचित उपेक्षा होती रही, उसका अन्त हुआ और स्वतंत्र प्रमाण द्वारा समर्थन प्राप्त होने की

स्थिति में पुराण विश्वास–स्थापन के योग्य समझे जाने लगे। पुराणों का विशेष अध्ययन तो पिछली शताब्दी के आरम्भ में पार्जीटर ने किया। उनके धैर्य और अध्यवसाय युक्त अनुसन्ध गान का यह फल हुआ कि पुराणों की ऐतिहासिक सामग्री का एक पर्यालोचनात्मक विवरण जगत के सामने आया। पुराणों में जो ऐतिहासिक वर्णन है, उसका पक्ष इससे बहुत प्रबल हुआ है। स्मिथ ने यह प्रमाणित किया है कि मत्स्यंपुराण में आन्ध्रों का जो वर्णन है वह प्रायः सही है। इतिहास के विद्वानों ने अब यह जाना है कि मौर्यो के विषय में विष्णुपुराण का और गुप्तों के विषय में वायुपुराण का वर्णन विश्वसनीय है। पुराणों की ओर अब तक जो कुछ ध्यान दिया जाता था, उससे कहीं अधिक ध्यान देने के पात्र वे अब समझे जाते हैं । पुराण अब भारत के परम्परागत इतिहास वृत्त के एक बहुत बड़े प्रमाण माने जाने लगे हैं। ऐतिहासिक सामग्री की खोज के लिये आजकल पुराणों का विशेष रूप से आलोचनात्मक अध्ययन होता है। आधुनिक इतिहासकार और प्राच्य तत्त्ववित् रैपसन, स्मिथ, जायसवाल, भंडारकर, राय चौधरी, प्रधान, रंगाचार्य, आलतेकर, जयचन्द्र आदि ने अपने ऐतिहासिक ग्रन्थों, समीक्षाओं, प्रबन्धों और लेखों में पौराणिक सामग्री का उपयोग किया है। भारतीय संस्कृति और सभ्यता के व्यापक इतिहास के लिये पुराणों का बड़ा महत्त्व है, क्योंकि इनमें अर्थशास्त्र, समाजशास्त्रं, शासन संस्थाएँ, धर्म, तत्त्वज्ञान, कानून और उसकी संस्थाएँ, ललित कलाएँ, शिल्पशास्त्र आदि विविध विषयों के विस्तृत प्रकरण है। विगत दो सहस्त्र वर्षों से भी अधिक काल से रामायण और महाभारत के साथ पुराण भी भारतीय जीवन को अपने विविध आदर्श पुरूषों के चरित्रों से अनुप्राणित और प्रभावित करते चले आ रहे हैं। राम, कृष्ण, हरि, शिव आदि नाम आज भी करोड़ों मनुष्यों के जीवनधन है। दीन–दुःखी जनता के छिन्न–भिन्न स्नायुओं और भग्नहृदयों को बल देकर तथा उनमें आशा – विश्वास का संचार कर पुराणों ने उन्हें उबारने का काम किया है। पाश्चात्य शिक्षा के प्रभाव से ऐसे लोग पहले निकले, जो पुरातन तथा परम्परागत प्रत्येक वस्तु की हँसी उड़ाना ही जानते थे। उनकी दृष्टि में पुराणों का मूल्य कूड़े–करकट से अधिक नहीं था। यह महान शुभ चिन्ह है कि पुराणों के सम्बन्ध में अब आधुनिकों की दृष्टि बदल रही है।"[4]

इतिहास और पुराणों का पुनः संकलन द्वापर के अंत में भगवान कृष्णद्वैपायन बादरायण व्यास ने किया । आज महाभारत और पुराण इसी रूप में उपलब्ध है। जो ज्ञानसूत्र को समझने तथा उसकी रक्षा करने के अधिकारी थे, उन्हें ईश्वरीय ज्ञान – – सूत्रों के रूप में प्राप्त हुआ। ये ईश्वरीय सूत्र ही वैदिक मंत्र है। जो ज्ञान सूत्र रूप मंत्रों में मन एकाग्र करके मन्त्र–दर्शन में समर्थ नहीं थे, जो सस्वर उच्चारण नहीं कर सकते थे, जिनकी बुद्धि परोक्षवाद नहीं ग्रहण कर सकती थी, उनके लिये वेदार्थ

सरल रीति से प्रकट हुआ। सृष्टि के आदि में ही उन्हें इतिहास और पुराण का ज्ञान स्त्रष्टा से उसी प्रकार, ऋषि परम्परा से प्राप्त हुआ जिस प्रकार द्विजातियों को वैदिक ज्ञान। दोनों में कोई अंतर नहीं था । केवल एक सूत्र रूप था और दूसरा भाष्य रूप ।[5] जैसा कि वृहदारण्यकोपनिषद् में लिखा गया है–

"स यथार्द्रेधाग्नेरभ्याहितात्पृथग्धूमा विनिश्चरन्त्येवं वा अरेऽस्य महतो भूतस्य निश्वसितमेतद्यदृग्वेदो यजुर्वेदः सामवेदोऽथर्वांगिरस इतिहासः पुराणं विद्या उपनिषदः श्लोकाः सूत्राण्यनुव्याख्यानानिव्याख्यानान्यस्यैवेतानि निश्वसितानि।"

जैसे गीले ईंधन में अग्नि लगाने से धुँआ निकलता है, उसी प्रकार ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अंगिरस अथर्ववेद, इतिहास, पुराण, धनुर्वेदादि विद्या, उपनिषद्, श्लोक, सूत्र, मंत्र विवरण तथा अर्थवाद– वे इस महद्भूत (परमात्मा) के ही निःश्वास है। इस प्रकार श्रुति ने पुराणादि समस्त शास्त्रों को अपौरुषेय, अनादि बतलाया है। यह ईश्वरीय ज्ञान ब्रह्माजी को मिला। इसके पश्चात् ब्रह्मा जी ने सभी के लिये उस ज्ञान को प्रकट किया–

''इतिहासपुराणानि पञ्चमं वेदमीश्वरः।
सर्वेभ्य एव वक्त्रेभ्यः ससृत्जे सर्वदर्शनः।।"[6]

इतिहास और पुराणरूप पाँचवे वेद को उन समर्थ सर्वज्ञ ब्रह्मा जी ने अपने सभी मुखों से प्रकट किया।

"पुराणं सर्वशास्त्राणां प्रथमं ब्रह्मणास्मृतम् ।
अनन्तरं च वक्त्रेभ्यो वेदा अस्य विनिर्गताः।।''[7]

समस्त शास्त्रों में ब्रह्मा जी ने सर्वप्रथम पुराणों का स्मरण – उपदेश किया। पीछे उनके मुखों से वेद प्रकट हुए। मत्यस्य पुराण के इस वचन ने स्पष्ट कर दिया कि ज्ञान की प्राप्ति मनुष्य को ईश्वर की ओर से सर्वप्रथम स्पष्ट और विस्तृत रूप में हुई। उस स्पष्ट रूप के सभी अधिकारी थे। पीछे उस ज्ञान के मूल सूत्र, जो सूत्र समझने में और उनकी रक्षा करने में समर्थ थे उनको प्राप्त हो गये ।

पुराणों में तीन प्रकार के वर्णन एक साथ चलते हैं। आधिभौतिक, आधिदैविक और आध्यात्मिक। ये तीनों सत्य हैं। वस्तुतः आध्यात्मिक नित्य जगत के अनुसार ही अधिजैविक भाव जगत् है और उसी से अधि ाभौतिक स्थूल जगत व्यक्त हुआ है। तीनों जगत परस्पर सर्वथा अनुरूप हैं। अतः

कोई एक व्याख्या सत्य होने पर तीनों ही सत्य होंगी। जो लोग यह कहते हैं कि रामायण और महाभारत हृदयों में होने वाले देव एवं असुर भावों के संघर्ष के रूपक हैं, वे भौतिक जगत की घटनाएँ नहीं है, वे यह नहीं समझते कि अन्तर्जगत् ही स्थूल जगत् में व्यक्त होता है। अतः जो अन्तर्जगत् का सच्चा रूपक है उसकी घटनाएँ ठीक ऐतिहासिक ही होंगी। जो स्थूल जगत की सत्य घटनाओं को छोड़कर रूपक बनाने चलेगा, वह अन्तर्जगत् का ठीक वर्णन कर ही नहीं सकता क्योंकि अन्तर्जगत् स्थूल जगत से कहीं असमानता नहीं रखता । नित्य इतिहास वेद में है और नित्य भूगोलादि भी। पुराणों ने वेदों के उसी रेखाचित्र में रंग भरकर उसकी आकृति को स्पष्ट किया है। जैसे वेदों में अपरिवर्तनीय इतिहास है। पुराणों ने कल्प भेद से उनमें जो परिवर्तन होते हैं, उनको भी स्पष्ट कर दिया है। यही दशा भूगोलादि की है।

आज हमारे समाज में ऐसे व्यक्ति मिलने बहुत कठिन हैं जो मन को एकाग्र करके वेद के मन्त्रों का अर्थ दर्शन कर सकें। अतः समाज के लिये वेदार्थ जानने का एक मात्र साधन पुराण ही रह गये है। पुराण दिव्य, अपौरूषेय ईश्वरीय ज्ञान के आकर है। वे ही भारतीय संस्कृति के प्रेरक, पोषक, आधार, तथा भण्डार हैं। उनमें न तो विकृति आई है और न उनकी कोई बात कोरी कल्पना ही है। पुराणों के वर्णन जहाँ रूपक है, वहाँ उनको स्पष्ट रूप से रूपक बता दिया गया है। जैसे श्रीमद्भागवत का पुरजनोपाख्यान शेष वर्णन अक्षरशः सत्य है।[8]

भारतीय संस्कृति में महर्षियों ने कभी भौतिकता को महत्त्व नहीं दिया। भारत ने मनुष्य जीवन का मात्र लक्ष्य अन्तर्मुख होकर आत्मोपलब्धि करना माना। विश्व के दूसरे सब कार्य सब चेष्टाएँ इसी लक्ष्य की प्रेरणा देंदृ यह् ऋषियों की सदा इच्छा रही। प्रत्येक राष्ट्र अपना इतिहास इसी दृष्टिकोण से लिखता है। कि उसका उद्देश्य पुष्ट हो। महर्षियों में भी भूगोल इतिहास, व्यक्ति, घटना आदि का इसी दृष्टि से वर्णन किया। जो स्थल, घटनाएँ या व्यक्ति समाज के लिये आध्यात्मिक प्रेरणा देने में किसी प्रकार सहायक हो सकते थे, वे चाहे साधारण दृष्टि से कम महत्त्वपूर्ण हों उनका वर्णन किया गया, और जो इस लक्ष्य में प्रेरक नहीं थे, वे चाहे जितने महत्त्वपूर्ण क्यों रहे हों उनकी चर्चा नहीं है। जैसे पुराणों में यह कहीं पता नहीं लगता कि जम्बूद्वीप का बड़ा भाग कब, और कैसे जलमग्न हुआ ।

पुराणों में अनेक ऋषियों या प्रधान पुरूषों की चरित संबंधी त्रुटियों के वर्णन हैं। ऐसी त्रुटियों को करने का कहीं आदेश तो है नहीं, लेकिन सत्य को छिपाया भी नही गया है। इस संबंध में साधारण दुष्टि और महापुरूषों की दृष्टि में ही अन्तर होता है। महापुरूषों का दृष्टिकोण होता है कि उनकी त्रुटियां प्रकट हो जाने वे प्रमाद से समाज सावधान रहेगा। लोग समझ लेंगे कि इतनी उच्च

स्थिति में भी ऐसे विकार आ सकते है, नहीं करेंगे। पुराणों में महर्षियों ने भी इसी कारण त्रुटियों को छुपाया नहीं है।

मनोवैज्ञानिक मानते है कि दृढ़ संकल्प में स्थूल पदार्थ को प्रभावित, रूपान्तरित तथा आमूल पुननिर्मित करने की शक्ति है। आरम्भिक युगों में मन में शक्ति थी। संकल्प बलवान् थे। इसी प्रकार प्रकृति की स्थूल शक्तियों का भी अत्यधिक ह्रास हुआ है। उस समय प्रकृति में भी अत्यधिक अभिव्यञ्जक शक्ति थी। आज भी अनेक घटनाएँ ऐसी हो जाती है, जो तर्क से सिद्ध नहीं हो पाती । पूर्वशक्ति प्रकृति और पूर्णशक्ति संकल्प के समय में विचित्र बाते होती ही रहती थीं। उस समय वे साधारण ही थीं। पुराणों में ऐसे वर्णन बहुत है उनको देखकर विवाद मचाना व्यर्थ है। वे सत्य है, इसमें संदेह नही। भारतीय ज्ञान, भारतीय दर्शन, भारतीय कला, भारतीय समाज व्यवस्था सबके आधार पुराण है। आधुनिक विद्वानों को भी इनके लिये पुराणों की ही शरण लेनी पड़ती है। ऐसी दशा में पुराणों पर आक्षेप और उनकी उपेक्षा व्यर्थ है। पुराणों का आदर, उनकी रक्षा तथा उनके ज्ञान के प्रसार में ही भारतीय संस्कृति की रक्षा एवं प्रतिष्ठा है।[9]

संदर्भ–ग्रन्थ

1. वायुपुराण, 1/203
2. अथर्ववेद, 1177124
3. छान्दोग्योपनिषद्, 7/1/2
4. सनातन धर्म और पुराण एक समीक्षा, डॉ. श्रीयुत अ. द. पुसालकर
5. सनातन धर्म और पुराण, श्री सुदर्शन जी चक्र
6. श्रीमद्भागवत, 3/12/39
7. मत्स्यपुराण
8. सनातन धर्म और पुराण, श्री सुदर्शन जी
9. श्री सनातन धर्म सभा शताब्दी ग्रन्थ पृ. 116 ग